इस शुद्ध आत्मा के, शुद्ध आत्मा के, पवित्र द्रव्य स्वभाव त्रिकाल आनंदकंद प्रभु यह शुद्धात्मा, जो सम्यग्दर्शन का विषय है। शुद्धात्मा त्रिकाली सम्यग्दर्शन का विषय, ध्यान का ध्येय, ध्यान पर्याय है, उसका ध्येय शुद्धात्मा। पूर्ण पवित्रता का पिण्ड वह शुद्ध। इस आत्मा को '**कर्मबंध के निमित्त से अशुद्धता होती है,**' कर्मबंध के निमित्त से... उपादान अपना ही है निमित्त कर्म, (जो) अशुद्धता मलिनता होती है, '**यह बात तो दूर रहो**' मलिनता तो लक्ष्य में लेने लायक वस्तु नहीं। सम्यग्दर्शन जिसको पाना है धर्म की पहली सीढ़ी अथवा धर्म की शुरूआत, धर्म की शुरूआत करना है, उसको शुद्धात्मा में जो मलिनता दिखती है उसका तो लक्ष्य छोड़ दो। क्योंकि वह कोई दृष्टि का ध्येय नहीं।

किन्तु उसमें दर्शन ज्ञान चारित्र के भी भेद नहीं... आहाहा ! एकरूप वस्तु चिद्घन एकरूप, उसमें दर्शन-ज्ञान-चारित्र तीन भेद करना वह भी विकल्प का कारण है, भेद है, (वह) व्यवहार का विषय है, वह सम्यग्दर्शन का विषय नहीं। आहाहा ! ऐसी बात है। धर्म की शुरूआत करनेवालों को अशुद्धता को लक्ष्यमें से छोड़ देना परंतु दर्शन-ज्ञान-चारित्र का भेद... अभेद में भेद करना छोड़ देना। आहाहा ! ऐसी बात है। 'भी' चारित्र के भी - ऐसा है न ? अशुद्धता तो दूर रहो परंतु भेद का

भी लक्ष्य दूर रहो। दर्शन, ज्ञान और चारित्र वह भी लक्ष्य में लेने लायक नहीं। भेद है तो दृष्टि के विषय में लक्ष्य लेने लायक नहीं। आहाहा ! सूक्ष्मविषय है।

क्योंकि भगवान आत्मा वस्तु है `**यह अनंत धर्मरूप एक धर्मी**' अनंत धर्म है, गुण है उसमें, परंतु वस्तु अपेक्षा एक है, गुण अपेक्षा अनंत है, परंतु गुणी अपेक्षा एकधर्मी, एकद्रव्य है, आहाहा ! - ऐसा मार्ग... वस्तु अनंत धर्मरूप अनंत गुणरूप एक धर्मी है एक द्रव्य है आहाहा ! परंतु व्यवहारीजन अज्ञानी व्यवहार में रहनेवाला परमार्थ को नहीं जाननेवाला `एक धर्मी को समझते नहीं' वह धर्म को समझें, कि यह ज्ञान वह आत्मा, दर्शन वह आत्मा - ऐसा धर्म को समझे परंतु धर्मी को (अभेद को) समझते नहीं। समझ में आया ? व्यवहारीजन धर्मों को ही समझते है। मात्र धर्मों को ही... ज्ञान, दर्शन और अस्तित्व वस्तुत्व ऐसे धर्म को जाने। धर्मी को नहीं जानते। परंतु धर्मी जो द्रव्य एकरूप है उसको जानते नहीं। आहाहा ! इसप्रकार आत्मा है अस्ति है - ऐसा गुण से तो कदाचित जाने, परन्तु एकरूप धर्मी है जिसमें गुण भेद भी नहीं - ऐसा एकरूप धर्मीद्रव्य को जानते नहीं। आहाहा ! कहाँ ले जाना है ? धर्मी को नहीं जानते।

`**इसलिये वस्तु के किन्हीं असाधरण धर्मों को**' असाधारण अर्थात उसमें यह है दूसरे में नहीं ऐसे असाधारण धर्म अर्थात गुण अवस्था गुण को `उपदेश में लेकर अभेदरूप वस्तु में' वस्तु तो अभेद है अनंत गुणों का एकरूप धर्मी है फिर भी नहीं समझनेवाले (को)... धर्मी अर्थात् द्रव्य की दृष्टि नहीं, वह गुण को ही जानते है, उनको अभेदरूप वस्तु में भी... वस्तु तो अभेद है, ज्ञान, दर्शन भिन्न है एवं वस्तु भिन्न है - ऐसा नहीं। अनंत गुणों का एकरूप चिदानंद द्रव्य एक है।

`वस्तु में भी धर्मों के नाम रूप भेदों को उत्पन्न करके' आहाहा ! वस्तु जो चिदानंद प्रभु आत्मा ज्ञायक का ध्रुव प्रवाह (सादृश्य) जानन, जानन, जानन ध्रुव द्रव्य स्वरूप प्रवाह अर्थात ध्रुव सदा रहनेवाला, उसको नहीं जानते, उसको धर्मों के नामरूप भेदों को उत्पन्न करके... धर्मों के नाम, कथनरूप करके, कि यह आत्मा ज्ञान है दर्शन है - ऐसा भेद धर्मों का नामरूपी कथन, वस्तु में भेद नहीं... आहाहा ! धर्मों के धर्मी अर्थात् द्रव्य उसकी दृष्टि करने को अभेद में भेद है नहीं, तब भी भेद... धर्मों का नामरूप भेद, कथनरूप भेद, ज्ञान-दर्शन - ऐसा कोई अंदर भेद नहीं अंदर अभेद में भी नाम कथन करके नामरूप भेद को उत्पन्न करके `- ऐसा उपदेश दिया जाता है, कि ज्ञानी के,' धर्मी के धर्मी अर्थात द्रव्य में `**दर्शन है, ज्ञान है, चारित्र है**' - ऐसा भेद करके समझाते हैं, समझ में आया ?

गाथा तो एकदम बहुत ऊँची है। वस्तु जो है अखण्ड अभेद उसमें कोई गुणभेद

है नहीं, वह तो अभेदवस्तु है, परंतु धर्मों को जाननेवाला, धर्मी को नहीं जाननेवाले को धर्म के नाम से कथन करके भिन्न-भिन्न कथन करके... वस्तु में भिन्न नहीं, परंतु यह आत्मा ज्ञान है, दर्शन है, चारित्र है - ऐसा धर्मी में धर्म का भेद न होने पर भी न समझनेवाले को भेद अर्थात कथन (भेद) से कह करके यह ज्ञान-दर्शन-चारित्र यह आत्मा में है। ***देवीलालजी ! (श्रोता :- वस्तु भेदा-भेद स्वरूप है) नहीं नहीं नहीं यह वस्तु भेदाभेद स्वरूप तो वीतरागता हो तब, भेदाभेद स्वरूप होने पर भी अभेद की दृष्टि कराने को, (भेद को गोण किया) जब तक भेद ऊपर लक्ष्य रहेगा तबतक राग होता है, और जबतक रागी है तबतक राग का विषय भेद है, तब यह भेद छोड़ने को, द्रव्य में भेद है नहीं। है तो वस्तु भेदाभेद, अंत में कहेंगे। परंतु जब वीतरागी हो जायेंगा फिर भेदा-भेद (को) जाननेवाला है। पहले जबतक रागी है तब अभेद जानना, दोनों जानने जायेगा तब विकल्प उत्पन्न होगा।*** वस्तु जो अखण्ड है यह अनंत गुण का पिण्ड है उसमें गुण भेद का लक्ष्य करोगे तब रागी होने से राग उत्पन्न होगा, ***भेद है अतः भेद को जानने के कारण राग होगा - ऐसा नहीं, क्योंकि भेद को तो केवली भी जानते हैं, परंतु यह रागी है तब भेद ऊपर लक्ष्य जायेगा तब राग ही उत्पन्न होगा।*** आहाहा ! ऐसी बात है।

यह कैसा उपदेश - ऐसा कहते हैं। बापू ! यह तो अंतर का मार्ग है वीतराग सर्वज्ञ परमात्मा कहते हैं वस्तु तो वस्तु है अंदर एकरूप अनंत धर्मों को पी गया अंदर में घुस गये है। ऐसे धर्मी को अर्थात द्रव्य को नहीं जाननेवाले को उसका धर्म अर्थात गुण जाननेवाले को, गुण (भेद) से समझाते हैं, कि अभेद में भेद नहीं परंतु नाम भेद कथन करके आत्मा में दर्शन, ज्ञान, चारित्र है - ऐसा व्यवहार से भेद करके, उपदेश करते हैं, ऐसी सूक्ष्म बातें हैं !

ज्ञानी अर्थात आत्मा में दर्शन है, ज्ञान है, चारित्र है, ज्ञानी शब्द से आत्मा (समझना)। आत्मा में दर्शन, ज्ञान, चारित्र नाम भेद कथन करके उनके द्वारा वह अभेद को जानें - इस अपेक्षा से नाम भेद कथन किया, वस्तु में भेद नहीं। आहाहाहा ! **`इसप्रकार अभेद में भेद किया जाता है'** इस अपेक्षा से वस्तु अभेद है एकरूप है, द्रव्य अपेक्षा, धर्मी अपेक्षा, तो एकरूप है, उसमें धर्मों का भेद करके व्यवहार कहकर, धर्मी को समझनेवाले को धर्म द्वारा धर्मी समझाते हैं। समझाना तो वह धर्मी है। आहाहा !

जिसे धर्म की शुरुआत करना हो, प्रथम धर्म की शुरूआत करना हो, प्रथम धर्म की शुरूआत पहले नम्बर (श्रद्धा) फिर दूसरा ज्ञान, चारित्र आदि (का) नम्बर पीछे। पहले सम्यग्दर्शन की सत्य दर्शन की शुरूआत करना हो तो उसको धर्मी की दृष्टि करना। द्रव्यदृष्टि, परंतु अज्ञानी एकदम द्रव्यदृष्टि को समझते नहीं, इसलिये

अभेद में भेद है नहीं फिर भी वे भेद से समझते हैं कि देखो यह ज्ञान - ऐसा जाने वह आत्मा, श्रद्धे वह आत्मा, स्थिर हो वह आत्मा - ऐसा गुण भेद नाम कथन करके बताते है। वस्तु में भेद नहीं। आहाहाहा ! अब इतना तो झगड़ा बाहर का। व्रत करो तप करो भक्ति करो... और यह अशुद्धता तो दूर रहो यह तो पहले कहा, यह अशुद्धता तो दूर रहो परंतु यहाँ तो गुणी में (धर्मी में) धर्मों का भेद है नहीं, फिर भी धर्मी में धर्म का भेद करके, धर्मी नहीं समझनेवाले को धर्म से धर्मी को समझाते हैं। आहाहा !

इसप्रकार अभेद में भेद किया जाता है, है तो वस्तु अभेद, एकरूप है, उसमें व्यवहार से भेद करके समझाया जाता है। है ? इसलिये (भेद) व्यवहार है। आहाहाहा ! दया, दान, व्रत, तप का भाव तो असद्भूत व्यवहार है, आहाहाहा ! वह तो दूर रहो उसका तो लक्ष्य छोड़ो परंतु (जो) उसमें है ऐसा दर्शन, ज्ञान, चारित्र जो सद्भूत व्यवहार है उसमें है, परंतु भेद नहीं, अंदर वस्तु अभेद है। आहाहा ! तब उसमें भेद डाल कर समझाना यह व्यवहार है। आहाहा ! यह आत्मा दर्शनरूप है, कौन विश्वास करेगा ? विश्वास करता है कौन ? जड़ करे ? राग करे ? मैं आत्मा हूँ - ऐसा विश्वास कौन करता है ? यह विश्वास वह सम्यग्दर्शन, सम्यग्दर्शन से द्रव्य का लक्ष्य कराना है, दृष्टि द्रव्य की कराना है।

परंतु अकेले द्रव्य को समझना (है) न समझ सके... धर्मी यह द्रव्य है, वस्तु है, वस्तु है परंतु जिसका विश्वास करनेवाली वस्तु वह द्रव्य है, जाननेवाला जानता है कौन ? यह जाननेवाली वस्तु वह आत्मा है। स्थिर होता है कौन ? रमते-रमते ठहरते हैं कि अंदर यह आत्मा (है) - ऐसा तीन गुणों को भेद करके व्यवहार कहकर समझाया है। नेमचन्द्रभाई ! ऐसी बात है। अभी तो बाहर में झगड़ा है। धर्मी कौन है उसकी दृष्टि बिना व्रत और तप और भक्ति, पूजा करो, करते-करते शुभ से शुद्ध हो जायेगा। यहाँ तो कहते हैं कि अशुद्ध परिणाम से सम्यग्दर्शन होता नहीं (उससे) दृष्टि द्रव्य ऊपर होगी नहीं, परंतु उसमें दर्शन-ज्ञान-चारित्र का भेद करने से भी दृष्टि अभेद में आती नहीं। आहाहा ! भेद ऊपर भी जबतक लक्ष्य रहेगा तबतक विकल्प उत्पन्न होगा। आहाहा ! - ऐसा मार्ग।

`यदि परमार्थ से विचार किया जाये` यथार्थ परम पदार्थ वस्तु अभेद की अपेक्षा विचार किया जाये, **`तो एक द्रव्य अनंत पर्यायों को अभेदरूप से पी कर बैठा है,`** वस्तु में अनंत गुण जो भेद अन्दर, पर्याय अर्थात् भेद अंदर में है, वह तो पी गया है। आहाहा ! जैसे पानी पी जाते है न ? इसीप्रकार अनंत धर्म, द्रव्य पी गया है, अंदर में पी गया है। आहाहा !

यदि परमार्थ से विचार किया जाय तो एक द्रव्य अनंत भेदों को, पर्याय अर्थात भेद, पर्याय को अर्थात भेदों को, अभेदरूप से पी कर बैठा है (अर्थात कि) द्रव्य में अनंतगुण अभेदरूप अंदर स्थित है, कहीं भिन्न है नहीं। समझमें आया ? अरे ! अब ऐसी बात, फुरसत कब निकाले, एक तो बाहर की प्रवृत्ति धर्म के नाम पर चला दी है। यह प्रवृत्ति से भी धर्म नहीं, परंतु अंदर जो वस्तु स्वरूप है, उसे भेद करके समझना परंतु भेद से भी धर्म नहीं। आहाहा ! ***अंदर वस्तु अभेद चैतन्य-ध्रुव-प्रवाह ध्रुव, ध्रुव, ध्रुव, ध्रुव, ध्रुव, ध्रुव ऊर्ध्व सदा ध्रुव। वह तो अनंत गुण पी गया है।*** अनंत गुण कोई भिन्न रहें नहीं, पी गया और एकरूप रहा है। आहाहाहा ! अब - ऐसा उपदेश...

यह तो अभी धर्म की प्रथम शुरूआत की बात है। चारित्र तो यह तो कहीं बाद की बातें... बापू यह चारित्र किसे कहना, यह लोगों को तो बाहर से नग्नपना धारण कर लिया कहीं पंचमहाव्रत का नाम रखे नाम यह महाव्रत तो कहाँ ? बहुत कठिन बात प्रभु है। हित की बात यह तो है किसी व्यक्ति की नहीं। व्यक्ति की बात है नहीं, हित ऐसे होता है, यह व्रत तप की अशुद्धता यह तो विकल्प है, वह तो दूर रहो, वह तो दृष्टि के विषय में है ही नहीं, परंतु वस्तु में दर्शन-ज्ञान-चारित्र आदि शक्तियाँ तो पड़ी हैं, (द्रव्य) पी गया है, अभेद है उसमें भेद करके बताना दर्शन, ज्ञान, चारित्र... वह भी व्यवहार है, व्यवहार के आश्रय से तो विकल्प उत्पन्न होता है। व्यवहार के आश्रय से सम्यग्दर्शन उत्पन्न नहीं होता, यह दर्शन-ज्ञान-चारित्र के भेदरूप व्यवहार से (भी) सम्यग्दर्शन नहीं होता। आहाहा ! ऐसी बात है।

भाषा तो सरल है पकड़ में आये - ऐसा है, नेमिचन्द्र भाई ! आहाहा ! क्या कहते हैं कि ऐसी सीधी बात है, वस्तु अंदर है न आत्मा ? यह (शरीर) तो पर चीज है, वस्तु जो अंदर है वह शरीर से तो भिन्न है, परंतु वह पुण्य और दया, दान का विकल्प से भी तो भिन्न है, आहाहा ! वह तो भिन्न है, परंतु उसमें दर्शन-ज्ञान-चारित्र का भेद करना, उससे भी अभेद भिन्न है। आहाहाहा ! बहुत कठिन काम। तुम्हारे नये भाई तो पहली बार सुनते होंगे ? यह तो आत्मा की बात है न प्रभु ? तुम्हारे घर की बात है। निज स्वरूप की बात है प्रभु ! तुम कैसे हो ?

यहाँ परमात्मा कहते हैं कि तुम्हें जो धर्म की शुरूआत करना है तो पुण्य और दया, दान के विकल्प को लक्ष्यमें से छोड़ दो, वह तेरी वस्तु में है नहीं, परंतु तुम्हारी चीज में है... दर्शन-ज्ञान-चारित्र तो स्वरूप में है अंदर में अभेद में है। अभेद भेद को पी गया है। परंतु भेद करके बताना दर्शन-ज्ञान-चारित्र वह आत्मा वह भी व्यवहार है, उसके आश्रय से सम्यग्दर्शन नहीं होगा। भेद के आश्रय से तो राग

ही उत्पन्न होगा। क्यों ? वह रागी है इसलिए, भेद के लक्ष्य से राग उत्पन्न होता हो तो तब केवली भेद को सभी को जानते है केवली तो तीनकाल, तीनलोक सब भेद को पर्याय को सभी को जानते है, परंतु तुम छद्मस्थ हो, रागी हो, तो रागी का भेद पर लक्ष्य जायेगा तब राग ही उत्पन्न होगा। आहाहाहा ! भेद का लक्ष्य (ज्ञान) करने से राग उत्पन्न नहीं होगा, परंतु तुम रागी हो इसलिये भेद ऊपर लक्ष्य करने से राग होगा, आहाहाहा ! समझ में आया ? आहाहा ! ऐसी बात किस जाति की होगी यह ? यह वीतराग का मार्ग - ऐसा होगा ? जिनेश्वर का ? इस संसार में तो दया पालना और व्रत करना तथा उपवास करना, रस परित्याग करना तथा व्रतपरिसंख्यान करना बापू वीतराग, वीतराग जैन दर्शन कोई अलौकिक वस्तु है।

यहाँ तो कहते हैं... आहाहा ! यदि परमार्थ से विचार किया जाय तो एक द्रव्य अनंतभेदों को अभेदरूप से पीकर बैठा है, पर्याय का अर्थ भेद, अनंत गुण जो भेदरूप है उसको तो अभेद रूप पी गया है, अंदर में पड़ा है पूरा... एकरूप द्रव्य है इसलिये उसमें भेद नहीं। इसलिये अनंत भेद... अभेदरूप में स्थित है, इसकारण उसमें भेद नहीं। किस कारण ? अभेद में सभी गुण अंदर स्थित हैं अभेदरूप से, इसकारण उसमें भेद नहीं, और भेद करने जाओगे कि यह दर्शन है, यह ज्ञान है और यह चारित्र है तब व्यवहार विकल्प उत्पन्न होगा, और निर्विकल्प सम्यग्दर्शन उत्पन्न नहीं होगा। आहाहा ! समझ में आया। आहाहाहा !

दूसरा पेराग्राफ भावार्थ का दूसरा...

`यहाँ कोई यह कह सकता है'** भाषा देखी ? यहाँ कोई कह सकता है, कह सकते है कि **`पर्याय भी द्रव्य का ही भेद है' यह सभी गुण द्रव्य का ही स्वभाव हैं। द्रव्य का ही भेद है। **`अवस्तु तो नहीं'** यह गुण तो कहीं अवस्तु नहीं। गुण और भेद जो है यह कोई अवस्तु अर्थात पर वस्तु नहीं। **अवस्तु अर्थात पर वस्तु को अवस्तु कहते हैं, क्या कहा ? क्या कहा ? कि आत्मा की अपेक्षा से भेद है यह कहीं अवस्तु नहीं।** अवस्तु किसे कहें, कि आत्मा के अलावा दूसरा आत्मा, दूसरे जड़ उनको इस वस्तु की अपेक्षा से उनको अवस्तु कहें क्योंकि (यह तो) उसमें है नहीं अतः अवस्तु कहें तथा यह गुण तो उसमें है, उसको तुम अवस्तु कहकर व्यवहार क्यों कहते हो ? समझ में आया ?

फिर भाई तो नये है न नये आप, वह तो आते है बारंबार, यह समझने की चीज यह है, शेष तो धूल पानी है सारा, आहाहा ! क्या कहा ? यहाँ भावार्थ समझानेवाले पण्डितजी - ऐसा कहते हैं, कि यहाँ कोई कह सकता है, क्योंकि दर्शन-ज्ञान-चारित्र आत्मद्रव्य में है, आत्मा की वस्तु है, यह कोई अवस्तु नहीं अवस्तु अर्थात भिन्न नहीं।

परद्रव्य और परात्मा को भी इस द्रव्य की अपेक्षा अद्रव्य कहते हैं। इस वस्तु की अपेक्षा दूसरी वस्तु को अवस्तु कहते हैं। परंतु (जो) इस वस्तु में गुण हैं यह अंदर में है उनमें भेद करना तो, है उसमें भेद करना तो, यह कहीं अवस्तु नहीं (कहलाये) वस्तु अंदर है, लौजिक से बात करते हैं। आहाहा !

क्या कहा ? यहाँ कोई कह सकता है, क्योंकि उसमें गुण (विद्यमान) हैं, परवस्तु तो उसमें है नहीं, भगवान पंचपरमेष्ठी भी आत्मा की अपेक्षा से अवस्तु कहने में आते हैं। उसको व्यवहार कहनेमें आता है। अवस्तु को व्यवहार और वस्तु को निश्चय। तब भगवान पंचपरमेष्ठी यह देव-गुरु-शास्त्र आदि को परद्रव्य उसे तो अवस्तु कहो एवं व्यवहार कहो तब कुछ ऐतराज नहीं। परंतु (जो) अंदर में है, वस्तु में गुण है यह अवस्तु नहीं, उसमें है इसमें अवस्तु कहाँ से आई - ऐसा तुम प्रश्न कर सकते हो - ऐसा पण्डितजी कहते हैं। आहाहा !

यहाँ कोई यह कह सकता है, क्योंकि गुण तो द्रव्य के अंदर में भेदरूप है, वस्तु, ज्ञान-दर्शन-चारित्र आदि (स्वरूप) है, (यह) वस्तु में है। वस्तु में नहीं है यह जो परद्रव्य वस्तु में नहीं है। परंतु यह तो वस्तु में है, (जो) है उसे तुम व्यवहार कैसे कह सकते हो ? और अवस्तु क्यों कहते हो ? आहाहाहाहा ! लौजिक से बात करते हैं, यहाँ कोई कह सकता है, कह सकता है, कि गुण भी द्रव्य का भेद है, अवस्तु नहीं यह कोई पर चीज नहीं उसी द्रव्य का भेद है, यह कोई पर वस्तु नहीं, द्रव्य का ही भेद है तो यह वस्तु है, और वस्तु है उसको व्यवहार क्यों कहते हो ? अपनी चीज की अपेक्षा पर चीज अवस्तु कहो उसको व्यवहार कहो परंतु (जो) वस्तु (में) है उसको व्यवहार कैसे कहो ? अपनी वस्तु अपेक्षा परवस्तु अवस्तु है, तब उसे व्यवहार कहो। परंतु अपनी स्व चीज में जो गुण है, यह अपनी वस्तु है उसी को अवस्तु कह कर तुम भेद, व्यवहार क्यों कहते हो ? समझ में आया। आहाहाहा !

तब फिर उन्हें व्यवहार कैसे कहा जा सकता है, प्रश्न समझ में आया, प्रश्नकार का प्रश्न, तुम कर सकते हो - ऐसा कहते हैं। तुम प्रश्नकार प्रश्न कर सकते हो। पहले तो - ऐसा कहा। क्योंकि तुम्हारा द्रव्य जो है उसमें गुण है, गुण भेद है, उसमें न हो और पर में हो तब उसको तो अवस्तु कह कर व्यवहार कहो परंतु तुममें (जो) भेद है उसको तुम व्यवहार कहते हो तब वह तो अवस्तु हो गई, आहाहाहा ! समझ में आया ? भाषा तो सादी है, परंतु अब भाव तो... (भाव) परंतु यह सेठ लोग आये है अतः यह हिन्दी ली है, तुम्हारे लिए यह, बहनों की तो बिनंती थी बहनों ने कहा कि अभी हिन्दी रहने दो, वह अभी आयेंगे और शिक्षण शिबिर (होगा) तब

हिन्दी चलेगा कहा अभी, यह सेठिया आये है न, सुने तो सही एक भाई तो अपरिचित है। आहाहा ! मार्ग तो प्रभु...

शिष्य को - ऐसा कहते हैं अथवा प्रश्नकार को, टीकाकार अर्थात यह वचनिका कार - ऐसा कहते हैं कि तुम - ऐसा कह सकते हो। क्योंकि आत्मा है। उसमें गुण है और गुण है उनको व्यवहार कहना ? (यदि) कहते हो तो वह अवस्तु हो जाती है - ऐसा तुम प्रश्न कर सकते हो। आहाहा ! देवीलालजी। आहाहा ! यह वस्तु अंदर है, चैतन्य प्रकाश का पुण्ज, चैतन्यचन्द्र, एकरूप ध्रुव उसमें गुण है, एवं है, उसको तुम अवस्तु कह कर व्यवहार कहो, है उसको व्यवहार कहो ? है उसको निश्चय कहना चाहिए। जो उसमें नहीं हो, पर चीज नहीं है, उसको तुम व्यवहार कह सकते हो क्योंकि वह अवस्तु है। इस वस्तु की अपेक्षा अवस्तु है पर उसकी अपेक्षा से भले वस्तु हो, परंतु इसकी अपेक्षा से अवस्तु है तो अवस्तु को तुम व्यवहार कह सकते हो। परंतु तुम्हारी चीज में (जो) धर्म है, गुण है उनको तुम व्यवहार क्यों कहते हो, वह तो नहीं है - ऐसा हो गया। समझ में आया ?

भैयाजी ! भैयाजी को प्रेम लगता है, बात तो ऐसी है प्रभु यह तो दिगम्बर संतों की बातें लोगों को अभी सुनने में आतीं नहीं। आहाहा ! गजब बात है, समझ में आया ? क्या कहा भैया समझ में आया ? क्या कहते हैं ? कि एक ध्रुव वस्तु है आत्मा पदार्थ उसमें जो चीज न हो, शरीर, वाणी, मन, देव, गुरु, शास्त्र नहीं है, तब इस अपेक्षा से उनको अवस्तु कहा जाता है, अवस्तु कह कर व्यवहार कहा जाता है, परंतु अपने में गुण है, अंदर है, उसको हम व्यवहार कहकर अवस्तु कहते हैं। समझ में आया ? यह प्रश्न तो प्रश्नकार का है, तुम - ऐसा कह सकते हो ? क्योंकि भगवान आत्मा अनंत गुण स्वरूप है। दर्शन-ज्ञान-चारित्र आदि गुणस्वरूप है और उसको तुम व्यवहार कहो तो अवस्तु हो जायेगी, अवस्तु को व्यवहार कहते हैं। स्ववस्तु को निश्चय कहते हैं। देवीलालजी। आहाहाहा ! ठीक समय पर आये हो अच्छी गाथा चलती है, कलकत्ते से आये बहुत दूर दिल्ली से। आहाहा !

हमारे भाई आये है न लाड़नूवाले नहीं ? भगवान तेरी चीज ऐसी है भाई आहाहा ! और यह दिगम्बर संतो के अलावा... आहाहाहाहा ! ऐसी कथनी, आहाहा ! क्या, क्या कहते हैं ? आहाहा ! अर्थ करनेवाले प्रश्न कर्त्ता के मुख से बुलवाते है, कहो क्योंकि गुण तो अंदर में है, है उसको हम व्यवहार कहते हैं तो तुम कह सकते हो कि, है उसको व्यवहार कैसे कहें ? उसमें नहीं हो उसको व्यवहार कह सकते हैं। आत्मा में परद्रव्य नहीं शरीर कर्म देव-गुरु-शास्त्र आत्मा के अलावा कर्म आदि सब अवस्तु कहने में आतीं हैं। तब अवस्तु को तो व्यवहार तुम कहो परंतु अंदर में गुण है,

वस्तु में है, वस्तु में वस्तुत्वपने की शक्तियाँ है, यह है (उसको) तुम व्यवहार कहते हो तब उसका अर्थ यह हो गया, कि यह शक्तियाँ है ही नहीं? अवस्तु है, समझ में आया ? आहाहा !

सातवीं गाथा तो वैसे सर्वोत्कृष्ट है। उसमें भी यह सेठ आये ठीक समय पर, नेमिचन्द्र भाई ! आहाहा ! क्या कहते हैं ? प्रश्नकार के मुख से तुम प्रश्न कर सकते हो - ऐसा कहा, क्योंकि उसमें है वह तो निश्चय है, गुण है तो स्व में निश्चय है और गुण को भेद करके तुम अवस्तु व्यवहार कहते हो, तो व्यवहार तो अवस्तु होती है, अपने में जो चीज न हो उसको व्यवहार कहा जाता है, (जो) अपने में है उसे तो निश्चय कहा जाता है। तब तुम प्रश्न (कर सकते) हो। देवीलाल जी ! आहाहाहाहा ! (श्रोता :- समाधान भी बहुत सुन्दर किया) हाँ, प्रभु तुम प्रश्न कर सकते हो, क्योंकि अपनी चीज जो है, उसके गुण अपने में है, है फिर भी हम व्यवहार कहते हैं, तो तुम प्रश्न कर सकते हो, हैं उनको तुमने व्यवहार क्यों कहा ? उसमें न हो उस चीज को तुम व्यवहार कहो, परंतु यहाँ है उसको तो निश्चय कहना चाहिए, उसको व्यवहार क्यों कहा ? आहाहा !

यहाँ कोई कह सकता है - ऐसा कहा न ? तुम प्रश्न कर सकते हो, क्योंकि (यहाँ) प्रश्न करने का अवकाश है, क्योंकि (जो) गुण अपने में है वह तो निश्चय है और तुम गुण को व्यवहार कहते हो तो (गुण तो) अवस्तु हो गये। - ऐसा तुम प्रश्नकार प्रश्न कर सकते हो। आहाहा ! देवीलालजी ! आहाहा ! अरे यह बात प्रभु के घर की, तीनलोक के नाथ जिनेश्वर देव के अलावा कहां यह बात है ? आहाहा ! ऐसी बात। आहाहा ! प्रश्नकार के मुख से कहलाते है, तुम प्रश्न कर सकते हो, क्यों कर सकते हो ? कि आत्मा में गुण है, है, अनंतगुण भेदरूप है तब उनको तो तुम (ने) व्यवहार क्यों कहा ? न हो उसको व्यवहार कहो, अपने में कोई चीज न हो तब पर की अपेक्षा अपने में (है) आत्मा यह पर है नहीं अपनी अपेक्षा से पर है नहीं। पर में अपना है नहीं, तो पर को व्यवहार कहो, स्व को निश्चय कहो, आहाहाहा ! - ऐसा प्रश्न कर सकते हो तुम - ऐसा कहते हैं। कारण कि हम (में) है उसको व्यवहार कहते हो, तब तुम प्रश्न कर सकते हो, है उसको तो निश्चय कहो। अपने में न हो उसको व्यवहार कहो - ऐसा प्रश्न कर सकते हो तुम। आहाहाहा ! (श्रोता :- प्रश्न समझ में आये तब उत्तर समझ में आये) हमारे सेठ आये है न फिर इन्हें कुछ समझ में नहीं आये न यह नये इसबार डेढ़ साल बाद आये। आहाहा ! प्रभु तुम कौन हो ? तुम अंदर एकरूप वस्तु हो। आहाहा ! गुणों (को) भी पी गया है द्रव्य में अभेद रहे है। आहाहा ! उसमें गुण है, यह

गुण है और गुणी है - ऐसा भेद करना वह है (तो भी) उसमें भेद करके तुम व्यवहार कहते हो तो अवस्तु हो जाती है - ऐसा प्रश्नकर्ता कहता है। यहाँ कोई कह सकता है पर्याय भी द्रव्य के भेद हैं यह द्रव्य अर्थात गुणादि सभी, अवस्तु नहीं तब फिर उन्हें व्यवहार कैसे कहा जा सकता है ? अपने में है उसको व्यवहार कैसे कहा जाता है ? पर्याय, दर्शन ज्ञान चारित्र अथवा दर्शन ज्ञान चारित्र गुण भेद अंदर में है उसको तुम अवस्तु कहकर व्यवहार कहते हो ? तुम्हारे कहने से (वह) अवस्तु हो जाती है। उसमें है नहीं - ऐसा लगता है, बराबर है ? आहाहा ! आहाहा ! ऐसी बात कहीं (है नहीं) आहाहा ! गजब बात करते हैं और कितनी लौजिक से न्याय से लौजिक से। ओहोहोहो !

प्रभु प्रश्नकार से कहते हैं कि तुम प्रश्न कर सकते हो न प्रभु, क्योंकि गुण तो अपने में है ना। अपने में है पर्याय भी अपने में है न ! तो अपने में है उसको तो व्यवहार कैसे कहो ? उसको तो निश्चय कहो न तुम पर्याय है उसको व्यवहार कहते हो, व्यवहार तो अपने में जो चीज न हो उसको व्यवहार कहते हैं, व्यवहार तो अपने में जो चीज न हो उसको व्यवहार कहा जाता है और गुण और पर्याय तो अपने में है। उसको आप व्यवहार कैसे कह सकते हो ? उसका समाधान। यह प्रश्न भैयाजी ! सुनने में आता है समझ में (आता है) ? भाषा तो सरल है प्रभु ! आहाहा ! भगवान है न आत्मा अंदर। आहाहाहा ! तीनलोक का नाथ । उसे समझने की कथनी ! संतो, दिगम्बर संत कैसी करते हैं। आहाहाहा ! यह ठीक है। तुम्हारा प्रश्न ठीक है। ठीक तो कहा क्यों ? कि अंदर में गुण हैं पर्याय है, उसको हमने व्यवहार कहा, तब तुम्हारा प्रश्न ठीक है, कि अवस्तु को व्यवहार कहा जाता है, है उसको व्यवहार क्यों कहा ? यह तुम्हारा प्रश्न ठीक है, अब उसका समाधान करते हैं, आहाहा !

ठीक, यह ठीक है, **`किन्तु यहाँ द्रव्य दृष्टि से अभेद को प्रधान करके उपदेश दिया है'** तुम्हारी बात व्याजबी है। अपने में है उसको व्यवहार क्यों कहा, यह तुम्हारी बात ठीक है। उचित है - ऐसा तो स्वीकार किया। परंतु यहाँ भिन्न चीज, अन्य शैली से कहना है। यहाँ द्रव्यदृष्टि से अभेद को मुख्य करके उपदेश दिया है। अभेदवस्तु जो द्रव्यस्वभाव उसकी दृष्टि से, इसको दृष्टि के विषय की प्रधानता से, आहाहा ! अभेद को मुख्य करके उपदेश दिया है। **`अभेद दृष्टि में भेद को गौण कहने से ही'** क्या ? कहा ? अभेद में भेद है, गुण अंदर है। **`परंतु भेद को गौण करने से अभेद भली भांति मालूम हो सकता है।'**

तुम्हारा कहना ठीक है कि अंदर पर्याय अपनी है गुण अपना है तो (जो) अपना

(उसे) निश्चय कहो। इसको व्यवहार कहने से अवस्तु हो जाती है, यह ठीक है भैया तुम्हारा कथन। आहाहा ! परंतु हमारी कथनी में अभी द्रव्यदृष्टि को अभेद प्रधान करके कहना है, तब वहाँ भेद आता नहीं। आहाहाहा ! आहाहाहा ! ऐसी चारों तरफ की बात सर्वज्ञ परमेश्वर के अतिरिक्त (कहीं है नहीं) आहाहा ! कितनी बात लौजिक न्याय से सिद्ध करते हैं। प्रभु तुम्हारा प्रश्न बराबर है हो, परंतु हमें यहाँ अभेद दृष्टि की प्रधानता से कहना है, भेद को गौण करना है, है अवश्य, अभाव नहीं करना है। परंतु भेद को गौण करके अभेद त्रिकाली एक वस्तु की दृष्टि कराने को, ***दृष्टि का विषय तो बिलकुल अभेद है, अभेद ऊपर दृष्टि किये बिना सम्यग्दर्शन होता नहीं।*** आहाहाहा !

`अभेद दृष्टि में भेद को गौण कहने से ही अभेद भलीभांति मालूम हो सकता है।' अभेद दृष्टि में भेद है फिर भी भेद को गौण करके, अभाव करके नहीं, उसका लक्ष्य छुड़ाने को, उस तरफ का आश्रय छुड़ाने को उसको गौण करके व्यवहार है - ऐसा कहा जाता है, और निश्चय अभेद दृष्टि को मुख्य करके उसको निश्चय कहने में आया है। आहाहाहाहा ! अभी तो प्रथम धर्म की शुरूआत सम्यग्दर्शन उसका बीज कैसा है यह बात चलती है। आहाहा !

अब यह कुछ पता नहीं और प्रतिमा ले लो व्रत ले लो ब्रह्मचर्य ले लो। अमुक ले लो धूल में ही नहीं। आहाहा ! तुम्हारी बात ठीक है, क्योंकि अपने में है उसको व्यवहार कहना, यह तो अवस्तु हो जाती है अतः बात तुम्हारी ठीक है। यह तो स्वीकार किया। परंतु यहाँ द्रव्य दृष्टि से ***वस्तु की दृष्टि त्रिकाल अभेद ऐसी अभेद को मुख्य करके,*** मुख्य कह कर उपदेश दिया, और भेद को गौण करके, अभाव करके - ऐसा नहीं। अभेद दृष्टि में भेद को गौण करने से उसमें प्रधान कहा न? द्रव्यदृष्टि से अभेद को मुख्य कहा प्रधान नाम मुख्य, और अभेद दृष्टि में भेद को गौण कहने से अभेद भली भांति मालूम हो सकता है। भेद को लक्ष्य में नहीं लेने के कारण अभेद की दृष्टि कराने को, भेद जो है उसको गौण करके अभेद की दृष्टि कराने को भेद व्यवहार है - ऐसा कहने में आया है। आहाहाहा ! वहाँ खण्डवा वण्डवा में मिले - ऐसा है ? हमारे भैयाजी तो कहते हैं कि कहीं मिलता नहीं। (कहीं मिलती नहीं) यह वस्तु वीतराग की। आहाहाहा ! अलौकिक चीज है, भाग्यवान को तो सुनने मिले ऐसी बात है.

वस्तु भगवान आत्मा धर्मी के रूप में एक है। वह अनंत गुणों को पी गया अभेद हो गये है कोई भिन्न नहीं तब गुण को जो समझते है, अभेद को दृष्टि के विषय को नहीं समझते, उसको भेद से समझाया (है) किन्तु भेद से समझाया। परंतु

भेद से समझाया यह अभेद, भेद को समझाना है - ऐसा नहीं, दृष्टि वहाँ कराने को भेद से समझाया। आहाहा ! भेद को गौण करके, भेद को गौण करके, भेद को व्यवहार कहकर अवस्त कहा, वह इस अपेक्षा से कि त्रिकाली दृष्टि में अभेद में भेद नहीं, यह अभेद दृष्टि कराने को भेद की गौण करके व्यवहार कहा है, अब इसमें इतना ज्यादा याद कैसे रहें ? आहाहा ! (श्रोता :- याद कहाँ रखना है, समझना ही है) है ? आहाहा !

इसलिये भेद को गौण करके उसे व्यवहार कहा है। अभाव करके नहीं, है तो उसमें, पर अभेद की दृष्टि कराने को अभेद में भेद ज्ञात होता नहीं और भेद का लक्ष्य करने जाये तो राग उत्पन्न होता है और अभेद (की) दृष्टि कराने को, अभेद (की) दृष्टि को मुख्य करके... गुण है उसमें, भेद है परंतु भेद को गौण करके, व्यवहार कहने में आया है, अभेद को मुख्य करके निश्चय कहने में आया है। आहाहाहा ! - ऐसा है परंतु क्या करें ? दया पालना कि व्रत करना उपवास, स्वयं की दया तो पालो पहले, भेद का भी लक्ष्य छोड़कर अभेद की दृष्टि करना यह स्व दया है। अर्थात ? जैसा अभेद है - ऐसा जानना उसका नाम स्व दया है। है अभेद (उसको) भेदवाला जानना रागवाला जानना (यह) तो हिंसा की, अपनी वस्तु का अनादर किया। आहाहाहा ! आहाहा !

अभेददृष्टि में भेद को गौण करके कहने से ही अभेद भलीभाँति मालूम हो सकता है। इसलिये, इसकारण भेद उसमें होने पर भी, उसकी वस्तु में है, फिर भी भेद को गौण करके उसे व्यवहार कहा है। उसमें अभाव करके व्यवहार कहा नहीं, कि इसमें गुणभेद है ही नहीं, धर्म अंदर है ही नहीं। पर्याय है ही नहीं - ऐसा नहीं। परंतु अभेद त्रिकाली वस्तु जो अभेद एकरूप है उसकी दृष्टि में भेद, अभेद में मालूम होता नहीं, तब भेद को गौण करके व्यवहार अर्थात अवस्तु कहा और त्रिकाली अभेद को मुख्य कहकर वस्तु कहा। उसका नाम वस्तु कहा। आहाहाहा ! विषय आज सूक्ष्म है। आज अषाढ़ सुदी २ है आज तो, सौराष्ट्र का नयावर्ष प्रारंभ होता है। सौराष्ट्र में जामनगरवाले अषाढ़ सुदी २ को प्रारंभ मानते है न, अरे चिमनभाई ! उन्हें वास्तव में (पता) नहीं होता मुंबई रहते है न ? सौराष्ट्र में अषाढ़ सुदी २ को वर्ष प्रारंभ होता, जामनगर और उस तरफ, नवीन वर्ष वहाँ हैं। बोम्बे बहुत रहते हों उन्हें ख्याल नहीं हो। असाढ़ सुदी २ जामनगर और उस तरफ नया वर्ष प्रारंभ होता है, ३५वीं साल प्रारंभ होगी। ३४ वर्ष (पूरा हुआ), आहाहा !

क्या कहा ? प्रश्नकार से कहते हैं कि तुम प्रश्न कर सकते हो, क्यों कर सकते हो ? कि आत्मा में गुणों का भेद है, है फिर भी हमने उसे व्यवहार कहा,

तब तुम प्रश्न कर सकते हो। गुण है वह तो निश्चय है। स्व है उसमें तो निश्चय है और व्यवहार को तुमने अवस्तु कहा, अवस्तु को तुम व्यवहार कहते हो, तब यह आत्मा में गुण पर्याय नहीं है ? गुण पर्याय नहीं है, तव व्यवहार है ? - ऐसा प्रश्न तुम कर सकते हो, परंतु उसका उत्तर हमारा यह है, कि वस्तु जो अभेद (की) दृष्टि कराने को ***एकरूप त्रिकाली चीज इसका आश्रय करने से सम्यग्दर्शन होता है। तब त्रिकाली की अभेद की दृष्टि कराने को अभेद को मुख्य करके उसको निश्चय कहने में आया है।*** समझ में आया ? उपदेश दिया गया है, तथा गुणभेद (रूप) व्यवहार उसमें तो है तब इस अपेक्षा से निश्चय है, परंतु अभेद की दृष्टि कराने को भेद को गौण करके व्यवहार कहने में आया है। आहाहा ! - ऐसा है।

वीतरागमार्ग परमेश्वर त्रिलोकनाथ उसमें द्रव्य-गुण-पर्याय तीनों है। आत्मा में द्रव्य-गुण-पर्याय तीनों है। अपने में है तब यह निश्चय कहने में आया, अपने में परवस्तु नहीं उसे व्यवहार कहने में आया और तुम तो पर्याय को एवं गुण भेद को व्यवहार कहते हो जानों कि यह वस्तु ही नहीं। भैया ! हमने किस कारण से कहा है प्रभु तुम सुनो ! तुम्हारी पूर्ण प्रभुता जो द्रव्य अभेद है उसकी दृष्टि कराने को भेद उसमें है, उसकी दृष्टि कराने को भेद उसमें है (तो भी) गौण करके अवस्तु कहकर व्यवहार कहा, निश्चय वस्तु को वस्तु कहा। आहाहा ! (त्रिकाली) अभेद को निश्चय कहा। यहाँ तो यह कहा। त्रिकाली में तो तीनकाल आते है और पुनश्च यहाँ तो अभेद वस्तु तो वर्तमान में... आहाहा ! एकरूप वस्तु है प्रभु उसकी दृष्टि की प्रधानता से यह उपदेश देने में आया है, क्योंकि द्रव्यदृष्टि करने से समकित होता है, और भेद की दृष्टि करने से विकल्प उत्पन्न होता है। उसमें भेद है परंतु छद्मस्थ प्राणी है, रागी है... आगे कहेंगे - रागी प्राणी है अतः भेद का लक्ष्य करेंगे तो राग होगा, भेद का ज्ञान करने से राग होगा - ऐसा नहीं, परंतु तुम रागी प्राणी हो, अल्पज्ञ हो, छद्मस्थ हो, यह तुम में भेद है गुणपर्याय का भी, गुणपर्याय का लक्ष्य करेगा तो रागी प्राणी है अतः राग उत्पन्न होगा।

लो विशेष आयेगा। (प्रमाण वचन गुरुदेव !)